Gyanvividha, Vol.-3; Issue-3 (July-September) 2026 : PP-143-147

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान विषयों की अंतर्राष्ट्रीय सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध-पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Vol.-3; Issue-3 (July-Sept.) 2026
Page No.- 143-147
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

1. अंशु कुमारी

शोधार्थी – विश्वविद्यालय मैथिली विभाग,
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा.

2. प्रो0 (डॉ.) देव नारायण साह

शोध–निर्देशक – सेवानिवृत पूर्व विभागाध्यक्ष,
विश्वविद्यालय मैथिली विभाग, मधेपुरा.

Corresponding Author :

अंशु कुमारी

शोधार्थी – विश्वविद्यालय मैथिली विभाग,
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा.

श्रम आ लोकभाषाक आख्यान : सुभाष चन्द्र यादवक 'गुलो'क समाजशास्त्रीय अध्ययन

सारांश : समकालीन मैथिली कथा-साहित्यमे सुभाष चन्द्र यादवक रचनाशीलता अपन विशिष्ट जनपक्षधर दृष्टि, उपेक्षित जनजीवनक यथार्थ आ लोकजीवनसँ उपजल भाषिक चेतनाक कारण महत्त्वपूर्ण अछि। हुनकर उपन्यास 'गुलो' एहि रचनात्मक विशेषताक सशक्त उदाहरण अछि। प्रस्तुत शोध-आलेखक उद्देश्य 'गुलो'मे चित्रित निम्नवर्गीय ग्रामीण आ जनपदीय समाजक सामाजिक, आर्थिक आ सांस्कृतिक संरचनाक अध्ययन करब अछि। अध्ययनक आधार मूल मैथिली उपन्यासक उपलब्ध पाठ अछि। पाठ-विश्लेषणात्मक आ समाजशास्त्रीय व्याख्या-पद्धतिक माध्यमसँ उपन्यासमे निहित वर्गीय विपन्नता, श्रम, पारिवारिक सम्बन्ध, स्त्रीक स्थिति, बाल्यजीवन, शिक्षा, दहेज, सामाजिक प्रतिष्ठा, राजनीतिक चेतना आ लोकभाषाक भूमिका विश्लेषित कयल गेल अछि।

'गुलो'क केन्द्रमे एहन परिवार अछि जे जीवनक न्यूनतम आवश्यकतासभक पूर्तिक लेल निरन्तर संघर्षरत अछि। गुलो स्वयं नायकत्वक परम्परागत प्रतिमान नहि, ओ आर्थिक अभाव, बीमारी, पारिवारिक दायित्व आ सामाजिक असुरक्षाक बीच जीबैत सामान्य मनुष्य छथि। रिनियाँक चरित्रक माध्यमसँ बालिका-जीवन, श्रम, शिक्षा आ स्त्री-अस्मिताक जटिल प्रश्न उद्घाटित होइत अछि। उपन्यासक विशिष्टता ई अछि जे एतय गरीबी मात्र आँकड़ा वा पृष्ठभूमि नहि, अपितु जीवनक सम्पूर्ण संरचनाकेँ प्रभावित करऽ वला सामाजिक ताकति अछि। लोकभाषा, संवाद आ जनपदीय जीवनक सूक्ष्म चित्रण उपन्यासकेँ प्रामाणिकता प्रदान करैत अछि।

मुख्य शब्द : सुभाष चन्द्र यादव, गुलो, मैथिली उपन्यास, विपन्नता, जनपदीय समाज, श्रम, लोकभाषा, सामाजिक यथार्थ।

प्रस्तावना : सुभाष चन्द्र यादव अंचलक लेखक छथि। कोसी कान्हक। संस्कृत–शब्दार्थ–कौस्तुभमे अंचल शब्दक अर्थ अछि – अञ्च+अलच् = किनारा, छोर।[1] से ओ मात्र अचंक लेखकेटा नहि छथि हुनक कथा, उपन्यास सेहो एकरे लग–पास घुमैत रहैत छैक। लग–पास माने गाम,

शहर जिला नहि, एकर गरीबी, विपन्नता आ श्रमजीविताक संग।

साहित्य समाजक यान्त्रिक प्रतिलिपि नहि होइत अछि, अपितु समाजक अनुभव, अन्तर्विरोध, संघर्ष आ मानवीय संवेदनाक रचनात्मक पुनर्संयोजन होइत अछि। विशेषतः उपन्यास समाजक बहुस्तरीय संरचनाकेँ विस्तृत रूपमे ग्रहण करबाक क्षमता रखैत अछि। मैनेजर पाण्डेय लिखैत छथि, 'उपन्यास समाजेक लेल लिखल जाइत अछि'[2] एहि कारण उपन्यासमे व्यक्ति आ समाजक सम्बन्ध, आर्थिक संरचना, पारिवारिक जीवन, जाति-वर्ग, स्त्री-स्थिति, राजनीतिक चेतना आ सांस्कृतिक व्यवहार परस्पर जुड़ल रूपमे देखार पड़ैत अछि।

सुभाष चन्द्र यादवक 'गुलो'[3] एहि दृष्टिसँ समकालीन मैथिली उपन्यासक उल्लेखनीय कृति अछि। उपन्यासक केन्द्रमे कोनो असाधारण नायक नहि, अपितु साधारण जीवन जीबैत एहन व्यक्ति छथि जिनकर अस्तित्व प्रतिदिनक संघर्षसँ निर्मित अछि। उपन्यासक प्रारम्भिक दृश्य रिनियाँक माध्यमसँ एकटा गरीब परिवारक घरेलू जीवन, श्रम, अभाव आ सामाजिक दृष्टिक जटिलताकेँ सोझा आनैत अछि। एक दिस रिनियाँक चंचलता आ जीवनक सहज उमंग अछि, दोसर दिस खालिये पयर श्रम करैत बालिका, आर्थिक अभावमे चलैत परिवार आ पिता गुलोक अन्तहीन चिन्ता।

'गुलो'क सामाजिक संसार मूलतः ओहि जनपदीय समाजक संसार अछि जे साहित्यक मुख्यधारामे प्रायः कतियाअल रहैत अछि। उपन्यासक भूमिका 'आखिरी विपन्न मनुक्खक गाथा'मे केदार कानन एहि रचनाक जनपदीय भाषा, श्रमशील समाज आ विपन्न मनुष्यक जीवनकेँ विशेष महत्त्वपूर्ण मानैत छथि।[4] ओ सुभाष चन्द्र यादवक भाषाकेँ अभिजनक भाषिक संरचनाक समानान्तर सामान्य जनक अनुभव-भाषाक रूपमे देखैत छथि।

एहि आलेखक मूल प्रतिपाद्य ई अछि जे 'गुलो' मात्र एकटा गरीब परिवारक कथा नहि, अपितु मिथिलाक ओहि व्यापक निम्नवर्गीय समाजक आख्यान अछि, जाहिमे विपन्नता, श्रम, आत्मसम्मान, पारिवारिक विघटन आ पुनर्संयोजन, स्त्रीक सक्रिय उपस्थिति आ लोकभाषा एक-दोसरासँ गहिर रूपेँ सम्बद्ध छथि।

शोधक उद्देश्य आ पद्धति : एहि अध्ययनक प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित अछि—

- 'गुलो'मे चित्रित निम्नवर्गीय जनपदीय समाजक स्वरूपक विश्लेषण करब।
- आर्थिक विपन्नता आ श्रमक सामाजिक प्रभावक अध्ययन करब।
- गुलो आ रिनियाँक माध्यमसँ परिवार, स्त्री, बाल्यजीवन आ आत्मसम्मानक प्रश्नकेँ बुझब।
- उपन्यासक लोकभाषा आ संवाद-शैलीक सामाजिक महत्त्वक मूल्यांकन करब।

अध्ययनक मुख्य आधार 'गुलो'क उपलब्ध पाठ अछि। प्रस्तुत शोधमे पाठ-विश्लेषणात्मक आ समाजशास्त्रीय व्याख्या-पद्धतिक प्रयोग कयल गेल अछि।

'गुलो'क समाज : विपन्नताक किनारपर ठाढ़ जीवन : उपन्यासक मूल सामाजिक यथार्थ विपन्नता अछि। मुदा एहि विपन्नताकेँ धनक अभाव मानि लेलासँ उपन्यासक अर्थ पूर्ण नहि होइत अछि। एतय गरीबी जीवनक प्रत्येक निर्णयकेँ प्रभावित करैत अछि भोजन, शिक्षा, वस्त्र, इलाज, विवाह, पारिवारिक सम्बन्ध आ भविष्यक योजना सभ आर्थिक सीमासँ बान्हल छथि।

गुलो चाय-दोकान चलबैत छथि।[5] परिवारमे पत्नी, बेटा, बेटी आ अन्य आश्रित सदस्य छथि। परिवारक दैनिक जीवनक आधार छोट-छोट आय, उधार, श्रम आ वस्तुसभक बचतपर टिकल अछि। उपन्यासमे चाय, दूध, खिचड़ी, लाई, बीड़ी, नमकीन, जाड़ाक कम्बल सन सामान्य वस्तुसभक उल्लेख केवल विवरण मात्र नहि अछि; ई परिवारक आर्थिक अवस्थाक सामाजिक संकेत छथि। जीवनक प्रत्येक वस्तुक गणना आवश्यक अछि। रिनियाँक मेला जयबाक पाँच रुपैया, स्कूलक पोशाक-राशि, बेटाक नमकीन वा विवाहक खर्च सभ किछु आर्थिक संकटसँ जुड़ि जाइत अछि।

गुलो अपन जीवनक जोड़-घटावमे एतेक फँसल छथि जे हँसी बुझु हुनकर जीवनसँ विलुप्त भऽ गेल अछि। लेखक कहैत छथि, हुनका कोय हँसैत नै देखने होएत।[6] केदार कानन एहि स्थितिकेँ उपन्यासक केन्द्रीय मानवीय

त्रासदीक रुपमे रेखांकित करैत छथि– गुलोक जीवनक चिन्ता मात्र निर्धनताक वर्णन नहि, अपितु एहन परिस्थितिक चित्रण अछि जाहिमे मनुष्यक सहज हँसी धरि छिनि जाइत छैक। केदार कानन आगू लिखैत छथि– एकटा उदास, एकटा करुण, निर्गुण रागमे बहैत ई उपन्यास जीवनक यथार्थ उघारैत छैक, जीवंतता छैक, पात्र सभमे प्राण रचल–बसल छैक मुदा आर्थिक विपन्नताक कारणे सभ किछु हहरल छैक।[7]

एहि दृष्टिसँ 'गुलो'मे गरीबी करुणा उत्पन्न करबाक साहित्यिक उपकरण नहि अछि। ओ मनुष्यक चरित्र, व्यवहार आ नैतिक निर्णयकेँ आकार दैत अछि। अभावक कारण गुलो कखनो कठोर देखाइत छथि, कखनो असहाय, कखनो क्रोधित, कखनो स्वार्थी सेहो। मुदा ई स्वार्थ सम्पन्न समाजक संचयवादी स्वार्थ नहि, अस्तित्व-रक्षाक स्वाभाविक प्रतिक्रिया अछि।

श्रमक समाज आ अस्तित्वक गरिमा : 'गुलो'क समाज श्रमप्रधान समाज अछि। एहि समाजमे जीवनक सम्मान धन वा पदसँ नहि, अपितु श्रमसँ निर्मित होइत अछि। गुलो चाय बेचैत छथि; छोटुआ मिलमे मजदूरी करैत अछि; रिनियाँ घर-आँगन, बर्तन, भोजन आ दोकानक छोट-छोट काज करैत अछि; परिवारक स्त्रीसभ सेहो अपन-अपन हिस्साक श्रम सँ गृहस्थीकेँ चलबैत छथि।

विशेषतः रिनियाँक श्रम उल्लेखनीय अछि। ओ बालिका होइतहुँ घरेलू दायित्वसँ मुक्त नहि छथि। ओ घरक सफाई, बर्तन, भोजन आ दोकानसँ जुड़ल अनेक काज करैत छथि। शीतलहरीमे खाली पयर चलब, पानि आनब, जूठ गिलास धोअब आ घरक काज करब ई सभ दृश्य बाल्यजीवनक ओ यथार्थ सोझा आनैत अछि जतय खेलक स्थानपर श्रम प्रमुख बनि जाइत अछि।

उपन्यासक सामाजिक महत्त्व एहि बातमे सेहो अछि जे श्रमशील लोकक जीवनकेँ करुणाक निष्क्रिय वस्तु नहि बनाओल गेल अछि। श्रम एतय जीवनक शक्ति सेहो अछि। परिवारक सदस्य आपसमे झगड़ैत छथि, रूसैत छथि, मुदा पुनः श्रम आ दैनिक जीवनक आवश्यकतासभ हुनका एकठाम आनैत अछि।

एहि अर्थमे 'गुलो' श्रमक महागाथा नहि, श्रमक दैनन्दिनताक उपन्यास अछि। जीवनक असली संघर्ष असाधारण घटनामे नहि, प्रतिदिन चूल्हा जरब, दोकान चलब, मजुरी करब आ परिवार बचा कऽ रखबामे अछि।

परिवार : संघर्ष, कलह आ पुनर्संयोजन : 'गुलो'मे परिवारक चित्र आदर्शीकृत नहि अछि। एतय परिवार प्रेमक स्थिर केन्द्र नहि, अपितु आर्थिक संकटसँ प्रभावित सामाजिक संस्था अछि। अभाव बढ़ैत अछि तँ सम्बन्धसभमे तनाव उत्पन्न होइत अछि। छोट-छोट वस्तुसभ सेहो विवादक कारण बनि जाइत छथि। पाँच रुपैया, नमकीन, चप्पल, भोजन, शिक्षा आ विवाहक खर्चा ई सभ पारिवारिक सम्बन्धक भीतर प्रवेश कऽ जाइत अछि।

उपन्यासक एकटा महत्त्वपूर्ण प्रसंगमे रिनियाँ आ कंदाहावालीक झगड़ाक बाद परिवारक सदस्य भूखल रहैत छथि, मुदा बादमे बेलावालीक संवेदनशील पहलसँ भोजन बनैत अछि आ परिवार पुनः सामान्य स्थितिमे आबैत अछि। एहि प्रसंगक सामाजिक अर्थ गम्भीर अछि विपन्न समाजमे झगड़ा स्थायी विघटनमे परिवर्तित नहि होइत अछि, कारण जीवनक आवश्यकतासभ सम्बन्धसभकेँ पुनः जोड़ैत अछि।

एहि तरहेँ उपन्यासक परिवार बनैत-बिगड़ैत सामाजिक संरचना जकाँ गतिशील अछि। विघटन आ पुनर्संयोजन दुनू एक्के जीवन-प्रक्रियाक अंग छथि।

रिनियाँ : बालिका, श्रमिक आ उभरैत स्त्री-चेतना : 'गुलो'क सबसँ जीवंत चरित्रसभमे रिनियाँ प्रमुख छथि। ओ मात्र गुलोक बेटी नहि छथि; हुनकर माध्यमसँ निम्नवर्गीय बालिका-जीवनक अनेक आयाम उद्घाटित होइत अछि। हुनकर भीतर चंचलता अछि, हास्य अछि, उन्मुक्तता अछि, मुदा ओहि संग श्रम, अभाव आ सामाजिक असुरक्षाक यथार्थ सेहो अछि।

रिनियाँक सौन्दर्यक वर्णन उपन्यासमे बेर–बेर अबैत अछि,[8] मुदा हुनकर चरित्रक महत्त्व मात्र रूपमे सीमित

नहि अछि। हुनकर व्यवहारमे व्यावहारिक बुद्धि आ आत्मसम्मान स्पष्ट अछि। ओ अपन बहिनक घर मात्र "पेट पोसबाक लेल" जायब स्वीकार नहि करैत छथि। सामाजिक प्रतिष्ठाक प्रश्न हुनका बाल्यावस्थामे सेहो उद्वेलित करैत अछि।

रिनियाँक शिक्षा सेहो उपन्यासमे एकटा विडम्बनापूर्ण प्रश्न अछि। ओ विद्यालयमे नामांकित छथि, सरकारी सहायता भेटैत छनि, मुदा पारिवारिक विपन्नताक कारण शिक्षा प्राथमिकता नहि बनि पबैत अछि। हुनका भेटल पोशाक-राशि सेहो घरक आर्थिक आवश्यकतामे समा जाइत अछि। एहि प्रसंगसँ स्पष्ट होइत अछि जे गरीब परिवारक बच्चाक लेल शिक्षा मात्र विद्यालयमे नामांकनसँ सुनिश्चित नहि होइत। पेट, श्रम आ अस्तित्वक प्रश्न शिक्षा-व्यवस्थासँ पैघ भऽ जाइत अछि।

शिक्षा आ बाल्यजीवनक वर्गीय विडम्बना : 'गुलो'मे शिक्षा आधुनिक सामाजिक उन्नतिक प्रतीक होइतहुँ गरीब परिवार लेल सहज उपलब्धि नहि अछि। रिनियाँ विद्यालय जाइत छथि, मुदा नियमित शिक्षा हुनकर जीवनक केन्द्र नहि बनि पबैत अछि। घरेलू श्रम, आर्थिक अभाव आ संसाधनक कमी हुनकर शिक्षाजगतकेँ प्रभावित करैत अछि।

उपन्यास ई प्रश्न उठबैत अछि जे मात्र सरकारी योजना वा नामांकनसँ शैक्षिक समानता स्थापित नहि होइत। जँ बच्चा भूख, श्रम, वस्त्र आ पारिवारिक जिम्मेदारीसँ घेरल अछि, तँ विद्यालयक उपलब्धि सीमित भऽ जाइत अछि।

रिनियाँक विद्यालयक अनुभवमे साइकिल, पोशाक-राशि आ आर्थिक सहायता सन सरकारी प्रावधानसभक उल्लेख अबैत अछि, मुदा ओकर वास्तविक उपयोग परिवारक आर्थिक संकटसँ प्रभावित अछि। एहि प्रकारेँ उपन्यास नीति आ जीवनक बीचक दूरीकेँ उद्घाटित करैत अछि।

बाल्यजीवनक एहि वर्गीय विडम्बनामे 'गुलो'क सामाजिक यथार्थ विशेष रूपसँ प्रासंगिक अछि। गरीब बच्चाक बचपन खेल, शिक्षा आ स्वतंत्रतासँ कम, जिम्मेदारी आ श्रमसँ बेसी निर्मित होइत अछि।

लोकभाषा : सामाजिक पहचानक रचनात्मक आधार : 'गुलो'क एकटा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता ओकर भाषा अछि। उपन्यासक भाषा कथित मानक, अभिजन वा संस्कृतनिष्ठ भाषिक आग्रहसँ अलग जनपदीय जीवनक अनुभवसँ उपजैत अछि। पात्र जे भाषा घर-आँगन, दोकान, बाजार आ पारिवारिक जीवनमे बजैत छथि, कथा ओहिए भाषिक संस्कारमे विकसित होइत अछि।

गुलोक भाषाक सम्बन्धमे कुमार मनीष अरिवन्दक मन्तव्य देखल जाउ – 'गुलोक भाषा सभसँ बेसी ध्यान आकृष्ट कयलक अछि। गुलोक भाषा उएह छैक जे गुलो आकी ओकर घरवालीक छैक। गुलोक भाषा उएह छैक जे रिनियाँक छैक। गुलोक भाषा आजुक युगक अवहट्ठ छैक। अगिला समय अहि अवहट्ठक आबि रहल छैक।'[9]

भाषा एतय मात्र शिल्प नहि अछि, सामाजिक प्रतिनिधित्व अछि। गुलो, रिनियाँ, छोटुआ, बेलावाली आ आसपासक लोकसभक संवाद हुनकर वर्गीय, क्षेत्रीय आ सांस्कृतिक पहचानकेँ उद्घाटित करैत अछि।

एहि दृष्टिसँ 'गुलो' मैथिली उपन्यासकेँ भाषिक लोकतंत्रीकरणक महत्त्वपूर्ण कृति कहल जा सकैत अछि।

शीर्षक 'गुलो'क सांकेतिक अर्थ : उपन्यासक शीर्षक एकटा व्यक्तिक नामपर आधारित अछि, मुदा गुलो मात्र एकटा व्यक्ति नहि छथि। ओ अपन समयक व्यापक सामाजिक वर्गक प्रतिनिधि छथि। हुनकर जीवनक संघर्ष व्यक्तिगत होइतहुँ सामूहिक अर्थ ग्रहण करैत अछि।

गुलोमे पिता छथि, श्रमिक छथि, चाय-दोकानदार छथि, रोगी छथि, चिन्तित गृहस्थ छथि, बेटीक वियाहक चिन्तासँ व्याकुल व्यक्ति छथि आ कखनो नैतिक दृढ़ताक परिचय देनिहार मनुष्य सेहो छथि। एहि बहुआयामी व्यक्तित्वक कारण ओ गरीबक एकरूपी प्रतीक नहि बनैत छथि।

शीर्षकक महत्त्व एहि बातमे अछि जे उपन्यास समाजकेँ अमूर्त रूपमे नहि, अपितु एकटा सामान्य व्यक्तिक जीवनक माध्यमसँ देखबैत अछि। गुलोक घर-परिवारक कथा पढ़ैत-पढ़ैत पाठक मिथिलाक एकटा व्यापक सामाजिक संसारसँ परिचित होइत अछि। सुभाष चन्द्र यादव अपने कहैत छथि, हमर धारणा अछि जे कलाकृति कोनो

क्रांति नहि अनैत अछि। ओ मनुक्खक भावात्मक अभिवृत्ति आ दृष्टिकेँ बहुत सूक्ष्म ढ़ंगसँ बदलैत अछि आ दीर्घकालिक सामाजिक परिवर्त्तनक घटक होइत अछि। एकर अतिरिक्त आ किछु नहि। जे आलोचक एहिसँ इतर कोनो अपेक्षा आ आग्रह (जेना मैथिलीक चेतनावादी हठ) लऽ कऽ साहित्य लग जाएत, से अपनोकेँ ठकत आ दोसरोकेँ धोखा देत।'[10]

निष्कर्ष : सुभाष चन्द्र यादवक 'गुलो' समकालीन मैथिली उपन्यासमे सामान्य जनजीवनक महत्त्वपूर्ण आख्यान अछि। एकर केन्द्रीय सरोकार समाजक ओहि वर्गसँ अछि, जकर जीवन आर्थिक अभाव, श्रम, असुरक्षा आ सामाजिक उपेक्षाक बीच निर्मित होइत अछि। उपन्यासक सबसँ पैघ उपलब्धि ई अछि जे ई विपन्नताकेँ दयाक वस्तु नहि बनबैत, अपितु ओकर भीतर जीवित मानवीय गरिमा, हास्य, आत्मसम्मान, प्रेम, क्रोध आ संघर्षकेँ देखबैत अछि।

गुलो स्वयं एहन पात्र छथि जे पारम्परिक नायकक प्रतिमानसँ भिन्न छथि। हुनकर नायकत्व जीवनक संघर्षकेँ निरन्तर झेलबाक क्षमतामे अछि। रिनियाँक चरित्र उपन्यासक सामाजिक चेतनाकेँ आरो व्यापक बनबैत अछि। हुनकर माध्यमसँ बालिका-श्रम, शिक्षा, आत्मसम्मान, स्त्री-अस्मिता आ वर्गीय विषमताक प्रश्न उभरैत अछि।

उपन्यासमे परिवार विघटितो होइत अछि आ पुनः जुड़ितो अछि; गरीबी सम्बन्धमे तनाव उत्पन्न करैत अछि, मुदा सामूहिक जीवनक आवश्यकता पुनः सम्बन्धसभकेँ जोड़ि दैत अछि। श्रम जीवनक मूल आधार अछि। स्त्री परिवारक निष्क्रिय सदस्य नहि, अपितु आर्थिक-सामाजिक जीवनक सक्रिय केन्द्र छथि।

भाषाक स्तरपर 'गुलो'क योगदान विशेष महत्त्वपूर्ण अछि। लोकभाषा आ जनपदीय अभिव्यक्तिक माध्यमसँ उपन्यास ओहि समाजकेँ साहित्यक केन्द्रमे आनैत अछि, जे परम्परागत अभिजन साहित्यिक संरचनामे अपेक्षाकृत कम प्रतिनिधित्व पबैत रहल। एहि कारण 'गुलो'क सामाजिक यथार्थ आ भाषिक यथार्थ एक-दोसरासँ पृथक नहि छथि।

निष्कर्षतः कहल जा सकैत अछि जे 'गुलो' विपन्न मनुष्यक करुण कथा मात्र नहि, श्रमशील जनपदक जीवटता, आत्मसम्मान आ मानवीय अस्तित्वक आख्यान अछि। सुभाष चन्द्र यादव अपन रचनात्मक दृष्टिसँ मिथिलाक सामान्य जनजीवनकेँ उपन्यासक केन्द्रमे प्रतिष्ठित करैत छथि। एहि अर्थमे 'गुलो' समकालीन मैथिली उपन्यासक जनपक्षधर आ समाजशास्त्रीय अध्ययनक दृष्टिसँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कृति अछि।

संदर्भ सूची :

1. शर्मा, चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद, पंडित तारिणीश झा (सम्पादक), संस्कृत–शब्दार्थ–कौस्तुभ, इलाहाबाद : रामनारायण लाल, प्रकाशक, 1957, पृ0 सं0 – 24
2. पाण्डेय, मैनेजर, आलोचना की सामाजिकता, वाणी प्रकाशन, 2010, प्रथम संस्करण, नई दिल्ली, पृ0 सं0 – 312
3. यादव, सुभाष चन्द्र, गुलो, किसुन संक्लप लोक, गुदरी बाजार, सुपौल, 2015
4. पूर्वोक्त, पृ0 सं0 – 06
5. ओतहि, पृ0 सं.0 – 20
6. ओतहि, पृ0 सं0 –21
7. पूर्वोक्त, पृ0 सं0 – 8
8. पूर्वोक्त, पृ0 सं0 – 21
9. कुमार, मनिष अरविन्द, एहि युगक अवहट्ट उपन्यास गुलो, मिथिला दर्शन, कोलकाता, अंक – 1, जनवरी –2017, पृ0 सं0 – 49
10. मैथिली लेखक संघ द्वारा पटनामे आयोजित परिचर्चामे सुभाष चन्द्र यादवक वक्तव्य, साभार – मैथिली लेखक संघ

•